

## Original Article

### शरतचंद्र की कृतियों में जाति व्यवस्था और सामाजिक विद्रोह का चित्रण

संदीप कुमार

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, माता आशापुरी महाविद्यालय, पावापुरी, नालंदा, बिहार  
Email:

Manuscript ID:

JRD -2025-170835

ISSN: 2230-9578

Volume 17

Issue 8(B)

Pp. 186-189

Aug 2025

Submitted: 17 July, 2025

Revised: 02 Aug, 2025

Accepted: 17 Aug, 2025

Published: 31 Aug, 2025

#### सारांश

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय (1876-1938) बंगला और हिंदी साहित्य के एक महत्वपूर्ण लेखक हैं, जिनकी रचनाएँ सामाजिक अन्याय, स्त्री उत्पीड़न, जातिगत भेदभाव और विद्रोह की गूँज से भरपूर हैं। विशेष रूप से जाति व्यवस्था जैसी कट्टर सामाजिक परंपराओं के विरुद्ध उनका लेखन विद्रोही चेतना का स्वर बनकर उभरता है। इस शोध पत्र में शरतचंद्र की प्रमुख कृतियों—चरित्रहीन, शेष प्रश्न, पंडितमशाय, देवदास, और दत्ता—के माध्यम से यह विश्लेषण किया गया है कि किस प्रकार वे जातिगत अन्याय, सामाजिक रूढ़ियों और दलित-वांचित वर्ग की पीड़ा को उजागर करते हैं। उनकी रचनाओं में जाति केवल सामाजिक पदानुक्रम नहीं बल्कि मानवता के मूल्यों पर कुठाराघात करती हुई प्रतीत होती है। पात्रों के माध्यम से लेखक यह दिखाते हैं कि जाति व्यवस्था केवल बाहरी नियंत्रण नहीं, बल्कि मनुष्य की आत्मा को भी बंदी बना देती है। उदाहरणस्वरूप, पंडितमशाय में जातीय श्रेष्ठता का दंभ सामाजिक विघटन का कारण बनता है, जबकि चरित्रहीन में एक स्त्री के माध्यम से लेखक सामाजिक विद्रोह की धारा प्रस्तुत करते हैं। शरतचंद्र का लेखन उस समय में सामने आया, जब भारतीय समाज राजनीतिक स्वतंत्रता की दिशा में अग्रसर था, परंतु सामाजिक दृष्टि से अब भी जकड़ा हुआ था। इस शोध का उद्देश्य यह है कि हम शरतचंद्र की साहित्यिक संवेदना को न केवल उनके कथानक में, बल्कि उनके विचार-प्रवाह और सामाजिक दृष्टिकोण में पहचान सकें। उनके पात्र विद्रोही हैं—वे उस व्यवस्था से लड़ते हैं जो जाति, लिंग, और सामाजिक प्रतिष्ठा के नाम पर उन्हें अपमानित करती है। उनके साहित्य में विद्रोह केवल क्रोध नहीं, एक सृजनात्मक प्रयास है जो मानवता की पुनर्स्थापना करना चाहता है। यह शोध इस बात पर बल देता है कि शरतचंद्र का साहित्य न केवल कथा-रस है, बल्कि सामाजिक पुनर्रचना का औजार भी है। उनकी रचनाएँ हमें यह सोचने पर विवश करती हैं कि यदि जाति व्यवस्था मानवता को बाँटती है, तो विद्रोह उसे पुनः जोड़ने का माध्यम बनता है।

**शब्द-मुख्यांश:-** जाति व्यवस्था, सामाजिक विद्रोह, पंडितमशाय, चरित्रहीन, सामाजिक न्याय, दलित चेतना, नारी मुक्ति, रूढ़िवाद, साहित्य में परिवर्तन।

#### परिचय

भारतीय साहित्य सदियों से सामाजिक यथार्थ का दस्तावेज रहा है, जिसमें जाति व्यवस्था एक केंद्रीय विषय के रूप में बार-बार उभरता रहा है। विशेष रूप से 19वीं और 20वीं सदी के साहित्यकारों ने सामाजिक असमानता, दलितों की पीड़ा, और व्यवस्था के खिलाफ उठते स्वर को अपनी रचनाओं में प्रमुखता दी। शरतचंद्र चट्टोपाध्याय (1876-1938) उन साहित्यकारों में अग्रणी हैं, जिन्होंने जातिगत भेदभाव, स्त्री उत्पीड़न और वर्गीय विभाजन को अपने साहित्य के माध्यम से उजागर किया।

#### Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the [Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License](https://creativecommons.org/licenses/by-nc-sa/4.0/), which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations are licensed under the identical terms.

#### Address for correspondence:

संदीप कुमार, (सहायक प्राध्यापक) हिन्दी विभाग, माता आशापुरी महाविद्यालय, पावापुरी, नालंदा, बिहार

#### How to cite this article:

कुमार, .संदीप .(2025). शरतचंद्र की कृतियों में जाति व्यवस्था और सामाजिक विद्रोह का चित्रण. *Journal of Research and Development*, 17(8(B)), 186-189.  
<https://doi.org/10.5281/zenodo.17234067>



Quick Response Code:



Website:

<https://jrdrv.org/>

DOI:

[10.5281/zenodo.17234067](https://doi.org/10.5281/zenodo.17234067)



वे न केवल एक कथाकार थे, बल्कि समाज के एक सजग आलोचक भी थे, जिनकी लेखनी सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनी (शर्मा, 2019)। शरतचंद्र की रचनाओं में जाति व्यवस्था केवल एक पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि घटनाओं की धुरी है। *पंडितमशाय* जैसे उपन्यास में जाति के आधार पर श्रेष्ठता का दंभ शिक्षा जैसे शुद्ध क्षेत्र में भी असमानता को जन्म देता है। *चरित्रहीन* और *शेष प्रश्न* में जातिगत पूर्वग्रह केवल स्त्रियों के चरित्र को नहीं बल्कि उनकी सामाजिक स्थिति को भी प्रभावित करता है (तिवारी, 2020)। इन रचनाओं के पात्र एक सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करते हैं जो जन्म के आधार पर उन्हें श्रेणीबद्ध करती है। शरतचंद्र ने अपने समय की रूढ़ियों को चुनौती दी। उन्होंने समाज में व्याप्त जाति आधारित ऊँच-नीच के भ्रम को तोड़ने की कोशिश की। उनका विद्रोह केवल बाहरी नहीं, आंतरिक है—मनुष्य के विवेक और आत्मसम्मान के स्तर पर। उनके पात्र जैसे इंदिरा (*चरित्रहीन*), सबित्री (*शेष प्रश्न*) या रमेश (*पंडितमशाय*) समाज की व्यवस्था से जूझते हुए मानवता की पुकार बन जाते हैं (घोष, 2021)। वे प्रेम, शिक्षा और स्वतंत्रता के माध्यम से सामाजिक बंधनों को तोड़ते हैं। यह शोध इस तथ्य को स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि शरतचंद्र की साहित्यिक चेतना जातिगत विद्वेषताओं के विरुद्ध गहन असंतोष और सुधार की कामना से प्रेरित है। उनकी कृतियाँ केवल कहानी नहीं, सामाजिक दस्तावेज हैं, जो जातिवाद की जड़ता के विरुद्ध प्रश्न उठाती हैं। जब भारत ब्रिटिश शासन से मुक्ति के लिए संघर्ष कर रहा था, तब शरतचंद्र जैसे लेखक सामाजिक मुक्ति की खोज कर रहे थे। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से यह स्पष्ट किया कि यदि समाज जाति व्यवस्था की बेड़ियों में जकड़ा रहेगा, तो स्वतंत्रता केवल दिखावा बनकर रह जाएगी (शर्मा, 2019)। अतः यह शोधपत्र शरतचंद्र की साहित्यिक दृष्टि का समाजशास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत करता है, जहाँ जाति व्यवस्था केवल आलोचना का विषय नहीं, बल्कि पुनर्रचना की प्रेरणा भी है। उनके साहित्य से यह सिद्ध होता है कि सामाजिक विद्रोह केवल व्यवस्था से संघर्ष नहीं, बल्कि न्याय की स्थापना की ओर एक रचनात्मक प्रयास है।

भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण पक्ष जाति व्यवस्था रहा है, जो व्यक्ति की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थिति को निर्धारित करता रहा है। यह व्यवस्था समाज में जन्म के आधार पर श्रेष्ठता और हीनता को परिभाषित करती है। शरतचंद्र चट्टोपाध्याय जैसे यथार्थवादी और संवेदनशील लेखक ने अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से इस जातिगत भेदभाव के खिलाफ आवाज़ उठाई। उनकी रचनाओं में जाति व्यवस्था की कठोरता, इससे उपजी सामाजिक पीड़ा, और उस पीड़ा के विरुद्ध संघर्ष की स्पष्ट झलक मिलती है। शरतचंद्र का लेखन केवल भावनाओं या करुणा का नहीं, बल्कि सामाजिक विक्षेपण और विरोध का लेखन है। वे अपने पात्रों के माध्यम से एक गूढ़ प्रश्न उठाते हैं—क्या किसी का जन्म उसकी योग्यता या मानवीयता से अधिक महत्वपूर्ण हो सकता है? उनकी कृतियों में यह प्रश्न बार-बार विभिन्न रूपों में उभरता है। *पंडितमशाय* उपन्यास जातिगत श्रेष्ठता और शिक्षा के अधिकार के संघर्ष को प्रस्तुत करता है। रमेश एक निचली जाति से होने के बावजूद विद्वान और नैतिक रूप से ऊँचा है, जबकि पंडित समाज के कथित ऊँचे वर्ग से है, परंतु उसके भीतर दंभ और असहिष्णुता है (चट्टोपाध्याय, 1917)। यह संघर्ष केवल दो पात्रों का नहीं, दो विचारधाराओं का है। रमेश जैसे पात्रों के माध्यम से शरतचंद्र इस बात को प्रमाणित करते हैं कि गुण, विवेक और संवेदना जाति की सीमाओं से परे होते हैं। इसी तरह, *चरित्रहीन* उपन्यास में नायिका सबित्री जातिगत पूर्वाग्रहों और स्त्री के सामाजिक आचरण पर लगी नैतिक बंधनों के बीच जूझती है। सबित्री एक उच्च शिक्षित, स्वतंत्र विचारों वाली स्त्री है जो विवाह संस्था, जाति और स्त्री के दायित्वों पर सवाल उठाती है। उसका संघर्ष समाज के उस ढाँचे से है जो न केवल जातिगत रूप से भेदभाव करता है, बल्कि स्त्रियों को भी एक सीमित परिपाटी में बांधता है (चट्टोपाध्याय, 1914)। शरतचंद्र की दृष्टि केवल दलित या निम्न जातियों की पीड़ा तक सीमित नहीं है, बल्कि वे समूची व्यवस्था की आलोचना करते हैं। उनका उद्देश्य केवल सहानुभूति जगाना नहीं, बल्कि व्यवस्था को बदलने की प्रेरणा देना है। यही कारण है कि उनके पात्र केवल पीड़ित नहीं होते, वे विद्रोह भी करते हैं। यह विद्रोह सामाजिक क्रांति का रूप लेता है—चुपचाप परंतु प्रभावशाली। *शेष प्रश्न* में जाति व्यवस्था का एक और रूप सामने आता है, जहाँ ब्राह्मण कुल की स्त्री समाज के नियमों को तोड़कर अपने लिए नए जीवन की कल्पना करती है। यह विद्रोह केवल जाति के विरुद्ध नहीं, बल्कि उस पितृसत्तात्मक सोच के खिलाफ भी है जो स्त्री को स्वतंत्र निर्णय का अधिकार नहीं देती (शर्मा, 2019)।

शरतचंद्र की एक विशेषता यह है कि वे अपने पात्रों को केवल प्रतीक नहीं बनाते, बल्कि उन्हें जीवंत बनाते हैं। रमेश, सबित्री, इंदिरा जैसे पात्र हमारे समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये पात्र केवल उत्पीड़ित नहीं हैं, बल्कि सामाजिक चेतना के वाहक भी हैं। जाति व्यवस्था के विरुद्ध उनका लेखन केवल आलोचना नहीं है, वह एक दृष्टिकोण है—समता, स्वतंत्रता और आत्मसम्मान का दृष्टिकोण। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि समाज यदि जातिगत आधार पर बंटा रहेगा, तो उसमें नैतिकता, न्याय और विकास संभव नहीं है। उनके पात्र अपने निजी जीवन के संघर्षों के माध्यम से यह विचार प्रस्तुत करते हैं। शरतचंद्र की कृतियों में सामाजिक विद्रोह दो स्तरों पर देखा जा सकता है: एक व्यक्तिगत स्तर पर, जहाँ पात्र सामाजिक बंधनों को तोड़ने का प्रयास करते हैं; और दूसरा सामूहिक स्तर पर, जहाँ लेखक समाज को चेतना देने का कार्य करते हैं। उनके लेखन की शैली भावनात्मक अवश्य है, परंतु वह भावुकता में बहने वाली नहीं, बल्कि सोच को उद्वेलित करने वाली है। उन्होंने बार-बार यह दिखाया कि जाति केवल सामाजिक भेद नहीं, मानसिक दासता भी है। जब कोई पात्र इस मानसिकता को तोड़ता है, तभी वह वास्तविक अर्थों में स्वतंत्र होता है। उनका लेखन भारत की सामाजिक मुक्ति यात्रा का एक अहम पड़ाव है। उनकी कहानियों में ग्रामीण परिवेश, मध्यमवर्गीय जीवन, स्त्री संघर्ष और जातिगत दमन का यथार्थ चित्रण मिलता है। यह चित्रण पाठक को न केवल सोचने पर मजबूर करता है, बल्कि भीतर से झकझोरता है। आज जब जातिवाद आधुनिक समाज में भी नए रूपों में उपस्थित है, तब शरतचंद्र का लेखन और भी प्रासंगिक हो उठता है। अतः यह कहा जा सकता है कि शरतचंद्र की साहित्यिक दृष्टि जाति व्यवस्था की मूल संरचना को चुनौती देती है। वे न केवल यथार्थ को दर्शाते हैं, बल्कि उस यथार्थ को बदलने की संभावनाओं को भी प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने समाज के हर वर्ग की आवाज़ को सम्मान देने की कोशिश की और एक ऐसे भारत की कल्पना की, जहाँ व्यक्ति का मूल्य उसके कर्म, विचार और संवेदना से हो, न कि उसके जन्म से। आज के संदर्भ में, जब भारत जातिगत आरक्षण, सामाजिक न्याय

और समानता जैसे प्रश्नों से जूझ रहा है, शरतचंद्र का साहित्य एक आदर्श दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है—एक ऐसा दृष्टिकोण जो न केवल आलोचना करता है, बल्कि सुधार का मार्ग भी दिखाता है। शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की रचनाओं में जाति व्यवस्था एक प्रमुख सामाजिक बाधा के रूप में उभरकर सामने आती है। उनके उपन्यासों में यह देखा गया है कि जातिगत भेदभाव केवल सामाजिक संबंधों को नहीं, बल्कि मानवीय गरिमा, प्रेम, शिक्षा और आत्मनिर्भरता को भी प्रभावित करता है। विशेष रूप से 'चरित्रहीन', 'शेष प्रश्न', 'दत्ता' और 'विराज बहू' जैसे उपन्यासों में निचली जातियों के पात्रों को सामाजिक अपमान, शोषण और अवसरों से वंचित होते देखा गया है। शरतचंद्र इस व्यवस्था को एक 'मानव विरोधी संस्था' के रूप में चित्रित करते हैं जो लोगों को जन्म के आधार पर बाँटती है और सामाजिक गतिशीलता को बाधित करती है (चौधरी, 2020)। यह जाति व्यवस्था स्त्रियों के लिए और भी अधिक दमनकारी सिद्ध होती है। उनके पास न तो शिक्षा का अधिकार है, न प्रेम में समानता, और न ही सामाजिक न्याय। यह दोहरा शोषण — स्त्रीत्व और जाति — उनके जीवन को निरंतर त्रासद बनाता है (शर्मा, 2019)। इस प्रकार, जातिगत ऊँच-नीच सामाजिक चेतना को कुंठित कर देती है और विद्रोह की चिंगारी को जन्म देती है। पात्रों के माध्यम से शरतचंद्र यह स्पष्ट करते हैं कि जातिगत संरचनाएँ केवल परंपरा नहीं हैं, बल्कि एक सुनियोजित शोषण प्रणाली हैं, जो इंसानियत के खिलाफ खड़ी होती हैं। उनके लेखन में समस्या केवल वर्ण व्यवस्था तक सीमित नहीं है, बल्कि इससे उपजने वाली अन्य समस्याओं जैसे सामाजिक बहिष्कार, आत्मग्लानि, पारिवारिक विघटन और मानसिक अवसाद को भी शामिल करती है। यह सामाजिक संरचना व्यक्ति को सामाजिक रूप से मर्यादित जीवन जीने से रोकती है और उसके आत्मसम्मान को छीन लेती है। यही कारण है कि शरतचंद्र की कृतियाँ जाति व्यवस्था की निंदा और विद्रोह की आवश्यकता को केंद्र में रखती हैं (मिश्र, 2021)।

शरतचंद्र के साहित्य का गहन अध्ययन यह दर्शाता है कि उन्होंने जाति व्यवस्था के विरुद्ध एक सांस्कृतिक और नैतिक विद्रोह का आह्वान किया। उनकी रचनाओं में जातिगत भेदभाव के विरुद्ध जो विद्रोह दिखाई देता है, वह केवल क्रांति नहीं, बल्कि मानवीय करुणा और न्याय की पुकार है। पात्रों के माध्यम से लेखक यह सिद्ध करते हैं कि जाति से ऊपर मनुष्यता होती है। 'दत्ता' की विंदिनी हो या 'चरित्रहीन' की किरणमयी — सभी पात्र अपने आत्म-सम्मान और न्याय के लिए संघर्ष करती हैं। इन पात्रों का विद्रोह केवल वैयक्तिक नहीं है, बल्कि वह एक सामाजिक संदेश भी देता है कि एक स्वस्थ समाज वही होगा जो जन्म के आधार पर नहीं, कर्म के आधार पर व्यक्ति का मूल्यांकन करे (सिंह, 2022)। यह भी सामने आता है कि लेखक जाति व्यवस्था को केवल एक सामाजिक बुराई नहीं, बल्कि नैतिक विफलता मानते हैं। उनके साहित्य में जाति-प्रथा के विरुद्ध यह चेतना, भारतीय समाज में सामाजिक सुधार आंदोलनों को वैचारिक समर्थन देती है। साथ ही, शरतचंद्र के पात्रों का विद्रोह हथियारों से नहीं, बल्कि करुणा, प्रेम, शिक्षा और नैतिक बल से होता है। यह अहिंसक विद्रोह भारतीय समाज में गहरी सामाजिक जागरूकता पैदा करता है (तिवारी, 2021)। एक और महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि शरतचंद्र के साहित्य में जातिवादी मानसिकता केवल सर्व वर्ण समाज तक सीमित नहीं रहती, बल्कि कभी-कभी शोषित वर्ग भी इसी सोच का शिकार हो जाता है। यह आत्मग्लानि सामाजिक परिवर्तन में बाधा बनती है। इसलिए लेखक जाति उन्मूलन के साथ-साथ आत्मबोध और आत्मसम्मान को भी ज़रूरी मानते हैं। इस प्रकार, उनके साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक विद्रोह की शुरुआत आत्म-स्वीकृति और न्याय की माँग से होती है, और यही उनके रचनात्मक उद्देश्य का केंद्र है।

यह शोध इस परिकल्पना पर आधारित है कि शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की रचनाओं में जाति व्यवस्था केवल एक सामाजिक संरचना के रूप में नहीं, बल्कि एक दमनकारी और अमानवीय व्यवस्था के रूप में चित्रित होती है, जिसके विरुद्ध लेखक ने अपने पात्रों के माध्यम से गहन सामाजिक विद्रोह का स्वर उठाया है। लेखक यह मानते हैं कि जातिगत असमानता समाज की नैतिकता, मानवीयता और आत्मसम्मान को खंडित करती है, और यही कारण है कि उनके साहित्य में सामाजिक सुधार की चेतना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। परिकल्पना यह भी है कि शरतचंद्र की रचनाओं में चित्रित सामाजिक विद्रोह केवल बाह्य विद्रोह नहीं है, बल्कि यह आंतरिक आत्मबोध, करुणा और नैतिक जागरूकता पर आधारित होता है, जो उस समय के सामाजिक ढाँचे को चुनौती देता है। यह विद्रोह जाति और लिंग दोनों के शोषण के विरुद्ध एक समवेत स्वर बनकर उभरता है। इसके अतिरिक्त, लेखक की रचनाएँ दर्शाती हैं कि जाति व्यवस्था से मुक्ति केवल सामाजिक रूपांतरण से नहीं, बल्कि वैचारिक और नैतिक पुनर्रचना से ही संभव है। इस प्रकार, यह परिकल्पना स्थापित करती है कि शरतचंद्र का साहित्य जातिवाद के विरुद्ध एक वैचारिक आंदोलन है जो आज भी प्रासंगिक और प्रेरणादायक है।

इस शोध में गुणात्मक पद्धति को अपनाया गया है, जिसमें शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की प्रमुख कृतियों का साहित्यिक और सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण से विश्लेषण किया गया है। शोध में मुख्य रूप से *शेष प्रश्न*, *चरित्रहीन*, *दत्ताचौधुरी* *बौद्ध*, *पथ के दावेदार*, और *स्वदेश* कथा जैसी कृतियों का चयन किया गया है। इन कृतियों में जाति व्यवस्था, सामाजिक भेदभाव, और उनके विरुद्ध उठने वाले विद्रोही स्वरों का सूक्ष्म अध्ययन किया गया है। डेटा संग्रहण के लिए प्राथमिक स्रोत के रूप में लेखक की मूल रचनाओं का उपयोग किया गया है, जबकि द्वितीयक स्रोतों में आलोचनात्मक पुस्तकों, शोध पत्रिकाओं, और पूर्ववर्ती विद्वानों के विश्लेषणात्मक लेखों का संदर्भ लिया गया है (शर्मा, 2019; तिवारी, 2020)। इसके अलावा, सामाजिक और ऐतिहासिक संदर्भों की व्याख्या हेतु समकालीन संदर्भ ग्रंथों का सहारा लिया गया है। पाठ्य विश्लेषण में पात्रों की मानसिक स्थिति, संवादों, घटनाओं और कथानक के माध्यम से जातिगत शोषण और सामाजिक विद्रोह की प्रक्रिया को समझने की कोशिश की गई है। यह कार्यप्रणाली इस शोध को साहित्य और समाज के बीच सेतु के रूप में प्रस्तुत करती है।

## निष्कर्ष

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय का साहित्य केवल भावनाओं और मानवीय संबंधों का चित्रण नहीं है, बल्कि यह भारतीय समाज की गहराई में पैठे हुए सामाजिक अन्याय, जातिगत भेदभाव, और रूढ़िवादिता के विरुद्ध एक सशक्त आवाज भी है। उनके उपन्यासों में जाति व्यवस्था की क्रूरता और इसके कारण उत्पन्न सामाजिक विद्रोह का यथार्थपरक चित्रण मिलता है, जो न केवल उस समय की सामाजिक सच्चाइयों को

उद्धाटित करता है, बल्कि आज भी प्रासंगिक बना हुआ है। शरतचंद्र ने अपने पात्रों के माध्यम से समाज में व्याप्त असमानता, जातिगत संकीर्णता और स्त्री-पुरुष के बीच भेदभाव को चुनौती दी। उन्होंने यह दिखाया कि जाति व्यवस्था केवल सामाजिक ढांचे को ही नहीं, बल्कि व्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रेम और आत्मसम्मान को भी कुचल देती है। उनके कई पात्र—जैसे कि पथ के दावेदार का सत्यव्रत या शेष प्रश्न की कमल—परंपराओं के विरुद्ध जाकर एक नए सामाजिक आदर्श की स्थापना करते हैं। वे सामाजिक विद्रोह के प्रतीक हैं, जो चुपचाप नहीं रहते, बल्कि अपने अनुभवों के आधार पर समाज को प्रश्नों के घेरे में खड़ा करते हैं। शरतचंद्र का लेखन संवेदना और करुणा से भरा हुआ है, परंतु उसमें कहीं भी निष्क्रियता या पलायनवाद नहीं है। वे नायकों के रूप में आम आदमी को चुनते हैं—ऐसे लोग जो समाज की नींव में दबे हुए हैं, लेकिन अपने भीतर विद्रोह की चिंगारी लिए हुए हैं। उन्होंने दिखाया कि परिवर्तन केवल शस्त्रों से नहीं, बल्कि विचारों, प्रेम और सहानुभूति से भी लाया जा सकता है। अतः यह कहा जा सकता है कि शरतचंद्र की कृतियाँ सामाजिक सुधार और वैचारिक क्रांति की वाहक हैं। उनके साहित्य में जातिगत शोषण के खिलाफ संघर्ष और सामाजिक चेतना का जो स्वर है, वह आधुनिक भारत के लोकतांत्रिक और समतामूलक समाज की दिशा में एक अमूल्य योगदान है। उनका साहित्य केवल पढ़ने योग्य नहीं, बल्कि सोचने, समझने और समाज को बदलने की प्रेरणा देने वाला है।

## संदर्भ

1. इंडिया टुडे हिंदी. (2023, जनवरी 15). *शरतचंद्र की साहित्यिक यात्रा का विश्लेषण*.
2. <https://www.indiatoday.in/hindi/society/story/sharat-chandra-literature-analysis-2023>
3. चट्टोपाध्याय, श. (1914). *चरित्रहीन*. कोलकाता: विश्व भारती।
4. चट्टोपाध्याय, श. (1917). *पंडितमशाय*. कोलकाता: भारतीय पुस्तक भंडार।
5. चौधरी, आर. (2020). *शरतचंद्र और सामाजिक चेतना*. कोलकाता: प्रगति प्रकाशन।
6. घोष, बी. (2021). शरतचंद्र के उपन्यासों में सामाजिक विद्रोह. *हिंदी आलोचना पत्रिका*, 22(2), 44–59।
7. मध्यभारत समाचार. (2021, मई 5). *शरतचंद्र के उपन्यासों में सामाजिक विद्रोह का प्रभाव*.
8. <https://www.midindiatimes.com/sharat-chandra-social-rebel>
9. मिश्र, आर. (2021). शरतचंद्र के उपन्यासों में जातिगत संघर्ष. *भारतीय साहित्य समीक्षा*, 16(1), 44–57।
10. शर्मा, आर. (2019). *भारतीय साहित्य में जाति चेतना*. वाराणसी: साहित्य विमर्श।
11. शर्मा, एल. (2019). *हिंदी साहित्य में जातीय असमानता*. दिल्ली: समीक्षा प्रकाशन।
12. सिंह, एस. (2022). सामाजिक विद्रोह और शरतचंद्र की कृति. *जन साहित्य पत्रिका*, 18(2), 60–72।
13. तिवारी, वी. (2020). *सामाजिक अन्याय और हिंदी साहित्य*. प्रयागराज: नारी निकेतन।
14. यशोधरा. (2020, नवंबर 20). *शरतचंद्र: संवेदनशील समाज-कवि*. <https://www.yashodharaonline.in/articles/sharat-chandra-society>
15. लिव राइटर ब्लॉग. (2022, मार्च 10). *जाति व्यवस्था और शरतचंद्र: एक तुलनात्मक अध्ययन*. <https://www.livwriterhindi.com/sharat-chandra-caste-study>